January 2006

प्रश्न : संतकाव्य परम्परा में कबीर का स्थान निरूपित कीजिए।

उत्तर : 'संत' शब्द की व्युत्पत्ति शांत या सत्य से मानी गयी है। सामान्यतः 'संत' शब्द का प्रयोग किसी पवित्रात्मा सदाचिकारी पुरुष के लिए किया जाता है। कभी-कभी इसे साधु और महात्मा का पर्याय भी मान लिया जाता है। परन्तु संत मत में यह पारिभाषिक शब्द माना जाता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने संत को परिभाषित करते हुए लिखा है – 'यह उस व्यक्ति का बोध देता है जिसने सत् रूपी परमतत्त्व का अनुभव कर लिया हो और जो इस प्रकार अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर उसके साथ तद्रूप हो गया हो।'

भारत में आरंभ से ही अनेक ऐसे सम्प्रदाय प्रचलित रहे हैं जिसके अधिष्ठाता जनसामान्य में सम्प्रदायगत सिद्धान्तों या विचारों का प्रचार-प्रसार करते रहे हैं। संतमत भी ऐसा ही सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदाय के विभिन्न अनुयायियों द्वारा जो काव्य रचा गया, वही संत काव्य कहलाया।

संतकाव्य परम्परा का शुभारंभ बारहवीं शताब्दी में हुआ जिसका प्रवर्त्तक जयदेव को माना जाता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा का मत है कि 'संतकाव्य की रचना का आरंभ ईसवी सन् की बारहवीं शताब्दी से ही हो गया था। अभी तक इस बात को स्वीकार कर लेने में विशेष आपत्ति नहीं की जाती थी कि संत परम्परा के सर्वप्रथम पथ प्रदर्शक प्रसिद्ध भक्त कवि जयदेव थे जिन्होंने 'आदिग्रंथ' में संगृहीत पदों की रचना की थी।" जयदेव के पश्चात् भी इस परम्परा का उत्तरोत्तर विकास होता रहा और इस परम्परा में अनेक कवि हुए। सोलहवीं शताब्दी के संत कवियों में सधना, बेनी, त्रिलोचन, नामदेव आदि के नामोल्लेख किए जाते हैं। आगे इस परम्परा में अनेक कवि हुए जिनमें नानक, दादू, सुन्दरदास, धरनीदास, पलटू, जगजीवन, चरनदास, मलूकदास, दयाबाई, सहजोबाई, दरिया साहब (बिहारवाले), दरिया साहब (मारवाड़वाले) गुलाब साहब, बुल्ला साहब, बुल्लेशाह, यारी साहब, दूलन साहब, गरीब दास, काष्ठजिह्वा स्वामी, धर्मदास, दलपदास, पहलवानदास, तुलसी साहब, गोविन्द साहब और भीखा साहब के नामोल्लेख्य किए जाते हैं।

प्रायः सभी संत कवियों का आविर्भाव निम्नवर्ग में हुआ था तथा कविता करने का इनका उद्देश्य अपने विचारों का प्रचार करना था तथा आध्यात्मिक अनुभूति का प्रकाशन करना था। संतमत से सम्बन्धित गुरु और शिष्य दोनों अशिक्षित वर्ग के थे। अतः उपदेशों को मौखिक रूप में याद रखने के लिए उनका पद बद्ध होना आवश्यक था। कबीर ने स्वयं लिखा है – 'मसि कागद छूयो नहीं कलम गह्यो नहि हाथ।'

Notes

संत कवियों ने निजी अनुभूतियों के आधार पर अपनी विचाराभिव्यक्ति की है। अतः उनमें दर्शन की सी शुष्कता नहीं अपितु काव्य की-सी तरलता है। कबीर का कथन है –

'लिखा लिखी की है नहीं देखा देखी बात।'

संत कवियों ने निर्गुण ईश्वर, रामनाम की महिमा, सत्संगति, भक्तिभाव, परोपकार, दया, क्षमा आदि का समर्थन पूरे उत्साह से किया है तथा मूर्त्तिपूजा, धर्म के नाम पर की जाने वाली हिंसा, तीर्थव्रत, रोजा, नमाज, हज्ज आदि विधि-विधानों, बाह्याडम्बरों, जाति-पांत के भेद-भाव

आदि का घोर विरोध किया है। संत कवियों की उक्तियों को विषय-वस्तु की दृष्टि से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है —

27 Fri

(क) साम्प्रदायिकता, बाह्याडम्बर, लोकाचार, वर्गभेद, अंधविश्वास, धार्मिक रूढ़िवादिता तथा मूर्तिपूजा आदि के विरोध से सम्बन्धित उक्तियाँ

(ख) साधनात्मक तथा भावात्मक रहस्यवाद से सम्बन्धित उक्तियाँ

(ग) आचरण की पवित्रता, स्वभाव की ऋजुता, मानसिक अनुशासन, आन्तरिक शुचिता, आत्मसंयम तथा इन्द्रिय निग्रह आदि से सम्बन्धित उक्तियाँ।

संतकाव्य परम्परा में सर्वोपरि स्थान कबीर का है। कबीर की वाणियों का संग्रह उनके शिष्यों के द्वारा 'बीजक' नाम से किया गया। बीजक के तीन खण्ड हैं - साखी, सबद और रमैनी। बीजक के इन तीन खण्डों में विभिन्न विचारों की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। कबीर ने संतपरम्परा के अनुरूप हिंदू और मुसलमान दोनों ही धर्मों में व्याप्त बाह्याडम्बर, अंध विश्वास, ढोंग आदि का स्पष्ट विरोध किया। हिन्दुओं के लिए उन्होंने कहा है :

'पाहन पूजे हरि मिलें तो मैं पूजूँ पहाड़
ताते ये चक्की भली पीस खाय संसार।'

28 Sat

मुसलमानों पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने लिखा है :

'काँकड़ पाथर जोड़ि के मसजिद लिया चुनाय
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे बहिरा हुआ खोदाय।'

या फिर — 'दिनभर रोजा रखत हैं रात हनत हैं गाय
यह खून वह बंदगी कैसे खुशी खोदाय।'

गेरुआ वस्त्र पहनकर, केश-दाढ़ी बढ़ाकर तथा हाथ में चिमटा-कमण्डल धारणकर घर-घर अलख जगानेवाले ढोंगी संन्यासियों पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने लिखा है :

'मन न रँगाए, रँगाए जोगी कपड़ा।
आसन मारि मंदिर में बैठे नाम छोड़ि पूजन लागे पथरा ×××
दढ़िया बढ़ाय जोगी हो गेलें बकरा।'

कबीर ने अपने काव्य में ब्रह्मज्ञान का परिचय व्यापक रूप में दिया है। उन्होंने बाह्याडम्बर में दिग्भ्रमित मानव को सचेत करते हुए कहा है कि ब्रह्मज्ञान के बिना सांसारिक बाह्याडम्बर में फँसना निरर्थक है। जिस प्रकार फूल में सुगंध निवास करती है, उसी प्रकार प्रत्येक जीव में ईश्वर निवास करते हैं :

December 2005

			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

'तेरा साईं तुझ में ज्यों पुहुपन में वास
कस्तूरी का मिरग ज्यों वन-वन ढूँढ़ै घास।'

जीव की उत्पत्ति ब्रह्म से होती है और फिर वह उसी में समा जाता है, क्योंकि वह ब्रह्म का ही अंश है — 'जल में कुंभ कुंभ में जल है, भीतर बाहर पानी
फूटा कुंभ जल जलहिं समाना यह तत कथौ गियानी ×××

'पाणी ही ते हिम भया, हिम ही गया बिलाइ,
जो कछु था सोइ भया अब कछु कहा न जाइ।'

उपर्युक्त पंक्तियों में आत्मा और परमात्मा के अभिन्न एवं एकात्म सम्बन्ध का दिग्दर्शन कराया गया है। तात्पर्य यह कि जल में जल से भरे कुंभ की जो स्थिति होती है, वह स्थिति इस संसार जीव की होती है और जीव के बीच में आवरण बनकर माया खड़ी रहती है जब तक जीव इस माया से विलग नहीं होता, तब तक उसे ब्रह्म की प्राप्ति नहीं हो पाती है। कबीर ने भी माया को महाठगिनी के रूप में स्वीकार किया है :

'माया महाठगिनी हम जानी
तिरगुन फाँस लिए कर डोलै बोलै मधुरी बानी।'

अद्वैतवाद के अनुसार ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या है। कबीर ने भी इस संसार को क्षणभंगुर-नश्वर कहा है। उन्होंने परम सत्य की प्राप्ति के लिए जीव को सांसारिक से ऊपर उठने का आह्वान किया है :

कबिरा खड़ा बाजार में लिए लुकाठी हाथ
जो घर जारै आपनो चले हमारे साथ। × × ×

'रहिना नहि देस बिराना है
यह संसार कागद की पुड़िया बूँद पड़े घुल जाना है।'

जब आत्मा सब बंधनों से मुक्त होकर ब्रह्मत्व का अनुभव करने लगती है तब भिन्नत्व सूचक शब्द 'तू' की प्रतीति मिट जाती है। इसे सर्वत्र ब्रह्म की ही छाया दिखाई देने लगती है। 'छान्दोग्योपनिषद्' में इसे 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' की अवस्था कहा गया है। कबीर यहाँ उसी से अपना स्वर मिलाकर कहते हैं : 'लाली मेरे लाल की जित देखौं तित लाल
लाली देखन मैं गयी मैं भी हो गयी लाल।'

कबीर अद्वैतवादी होते हुए भी कभी-कभी द्वैतभाव को अपनाते हुए दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण यह है कि जब तक जीव ब्रह्मज्ञान नहीं प्राप्त कर लेता है, भगवान उसके लिए स्वामी, माता, पिता, पति आदि सब कुछ रहते हैं। वस्तुतः इसी रूप में कबीर ने सांसारिक सम्बन्ध का आरोपण किया है। इसका सांकेतिक अर्थ मात्र यही है कि ब्रह्म से कोई भी सम्बन्ध मानकर जीवन्मुक्ति की समीपता प्राप्त करे। वे आत्मा को दुल्हन और परमात्मा को पति मानकर दाम्पत्य भाव की अभिव्यक्ति इन शब्दों में करते हैं :

'दुलहिन गावहु मंगलचार,
हम घर आए हो राजा राम भरतार।'

अथवा - 'नयनों की करि कोठरी पुतली पलंग बिछाय, पलकों की चिक डारि के पिय को लिया रिझाय।'

कबीर ने ब्रह्म के लिए अनेक नामों का प्रयोग करते हुए उन्हीं नामों के सहारे ब्रह्मज्ञान की अभिव्यक्ति की है। खुदा, अलहल्लक, रहीम, राम, गोविन्द, मुरारी, सारंगपानी, हरि, तत, परमतत, साहिब, उन्मन, जोति, सत्य, शून्य आदि ये नाम उनके काव्य में मिलते हैं। परन्तु उनके राम दशरथ के पुत्र नहीं, अपितु निर्गुण ब्रह्म के पर्याय हैं -

'दशरथ सुत तिहुँ लोक बखानी, राम नाम का मरम है आना।'

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के सम्बन्ध में लिखा है - 'कबीर का ब्रह्मविचार किसी भी दार्शनिक के मतवाद से परे है, तार्किक बहस से बाहर है, पुस्तक की विद्या से अगम्य है, पर प्रेम से प्राप्य है, अनुभूति का विषय है, सहज भाव से भावित है।'

निःसन्देह उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कबीर ने अपनी रचनाओं में सूत्रपात का जो व्यापक, विस्तृत एवं सुस्पष्ट विवेचन किया है, वह प्रायः अन्य संतों से संभव नहीं हो सका है। कबीर की सर्वोपरिता

January 2006
29
30
February 2006

प्रश्न : रीतिमुक्त काव्यधारा की विशेषताएँ बताइए।

उत्तर : रीतिमुक्त काव्यधारा में मुख्यतः ऐसे कवियों को स्थान दिया गया है जिन्होंने आत्मानुभूति की प्रेरणा से स्वच्छन्द प्रेम का चित्रण मुक्तक शैली में किया है। इस परम्परा के अनेक कवियों - आलम, घनानंद, बोधा आदि कवियों ने न केवल काव्य में अपितु जीवन में भी स्वच्छन्द प्रेम को चरितार्थ किया था। इन हिन्दू कवियों ने मुस्लिम युवतियों से प्रेमकर स्वच्छन्दवादिता का परिचय दिया था। स्वच्छन्द प्रेम की अन्य वृत्तियाँ - सौंदर्यानुभूति, साहसिकता, विरह-वेदना आदि की प्रधानता इनके व्यक्तिगत जीवन में दृष्टिगोचर होती है। इनकी दृष्टि में नारी का व्यक्तित्व आराधना एवं साधना की ऐसी वस्तु है जिस पर वे अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं। इसलिए इनके प्रेम में भी एकोन्मुखता एवं भावना की गंभीरता परिलक्षित होती है। इनके जीवन में विरह-वेदना की अधिकता होने के कारण उसमें प्रणय का अत्यन्त स्वच्छ परिष्कृत एवं उदात्त रूप दिखाई पड़ता है जिसका मध्यकालीन काव्य में प्रायः अभाव है। इनका काव्य वैयक्तिक अनुभूतियों पर आधारित होने के कारण पर्याप्त शक्तिशाली एवं प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है। रीतिमुक्त काव्यधारा की मुख्य विशेषताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा सकता है :

(क) आत्मप्रेरणा एवं स्वानुभूति की विवृत्ति

(ख) वैयक्तिकता

(ग) स्वच्छन्द प्रेम या रोमांसिकता

(घ) नारी सौंदर्य के प्रति आस्था

(ङ) विरह की प्रधानता

(च) प्रौढ़ मुक्तक शैली।

(क) आत्मप्रेरणा एवं स्वानुभूति की विवृत्ति :

रीतिमुक्त काव्यधारा आत्मप्रेरणा और स्वानुभूति की विवृत्ति का काव्य है। इस धारा के कवियों ने अपनी आत्मा की पुकार की सहज एवं सरल अभिव्यक्ति की है। इनके काव्य में निज जीवन की अनुभूतियों को व्यापक एवं मार्मिक स्थान प्राप्त हुआ है। रीतिमुक्त कवियों में आलम, घनानंद, बोधा आदि कवियों ने आत्मा की पुकार पर न केवल काव्य में अपितु जीवन में सामाजिक और जातीय मर्यादा को तिलांजलि देकर प्रेम के सच्चे मार्ग का अनुसरण किया। इस दृष्टि बोधा की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :

'एक सुजान के आनन पै, कुरबान जहाँ लगि रूप जहाँ को
पून मिलै तो जहान मिलै नहि जान मिलै तो जहान कहाँ को।'

(ख) वैयक्तिकता : वैयक्तिकता रीतिमुक्त काव्यधारा की दूसरी विशेषता है।

December 2005
M T W T F S S
1 2 3 4
5 6 7 8 9 10 11
12 13 14 15 16 17 18
19 20 21 22 23 24 25
26 27 28 29 30 31